छात्रों के जीवन में समायोजन एवं व्यक्तित्व गुणों के महत्व का अध्ययन

[1]कल्पना चौधरी; [2]डॉ. डी. के. झा

[1]शोधकर्ता शिक्षा शास्त्र विभाग मेवाड़ यूनिवर्सिटी, गंगरार, चित्तौड़गढ.
[2]प्रिंसिपल, आई ए एम आर बी. एड. कॉलेज, गाजियाबाद

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 25 May 2019

Keywords
विद्यार्थी, नागरिक, कर्णधार

ABSTRACT

आज के ये विद्यार्थी ही कल देष के नागरिक होंगे। यही विद्यार्थी देष के कर्णधार बनेंगे तथा देष के विकास में उन्हें अपना योगदान देना होगा। यदि उन्हें देष का कर्मठ, प्रबुद्ध, समर्पित तथा ईमानदार नागरिक बनाना है तो उनके बहुमुखी व्यक्तित्व विकास, बौद्धिक, नैतिक व चारित्रिक उन्नयन में किसी स्तर पर कमी नहीं रहनी चाहिए। अतः विद्यार्थियों के लिए आज इस प्रकार की षिक्षा की आवष्यकता है जो उनमें समायोजन, स्वयं के प्रति उचित एवं सकारात्मक दृष्टिकोण, उत्तम सामाजिक व्यवहार तथा हमारी संस्कृति के अनुरूप शाष्वत मूल्यों का विकास करके अंततः उनके व्यक्तित्व का इस प्रकार विकास करे कि वे राष्ट्र और समाज के प्रति अपने दायित्वों का पूर्ण निर्वहन कर श्रेष्ठ नागरिक सिद्ध हो सकें। ऐसा होने पर ही भावी चिकित्सक रोगी की जान की कीमत समझेंगे, वकील सत्य का साथ देंगे तथा षिक्षक राष्ट्र निर्माता का अपना दायित्व निभा सकेंगे। व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के इन गुणों के विकास से सम्बन्धित तथ्यों की खोज का प्रयास षोधकर्त्ता अपने अनुसंधान में करेगा।

1.प्रस्तावना

जन्म के समय मानव प्राणी अपनी मूल प्रवृत्तियों का ही जीव होता है। इन मूल प्रवृत्तियों को सुन्दर स्थायी भावों में परिवर्तित करना शिक्षा का ही कार्य है। शिक्षा के फलस्वरूप मनुष्य एक दूसरे के लिए प्रेम–सहानुभूति तथा त्याग की भावना का अनुभव करता है। शिक्षा के ही परिणामस्वरूप वह अपने व्यक्तिगत हित की उपेक्षा करके समाज हित के लिए अपने को उत्सर्ग कर देता है। शिक्षा प्राप्त करने के कारण ही हम विविध सामाजिक संस्थाओं और संस्थानों का निर्माण करते है और विकास के पद पर आरूढ़ रहते है। शिक्षा के ही फलस्वरूप कला, साहित्य और विज्ञान के क्षेत्र में अपूर्व कृतियों का निर्माण होता है। शिक्षा के कारण ही तो आज की मानव सभ्यता और संस्कृति अपने वर्तमान स्तर पर पहुंच सकी है। शिक्षा के अभाव में मानव–बालक की प्रवृत्तियां और व्यवहार एक निम्न कोटि के पशु के समान होंगे। मानव समाज से अलग हो जाने के कारण कितने ही बच्चों का विकास अवरोधित हो गया है। इसके अनेक उदाहरण हमारे सामने है जिन बच्चों को अच्छी शिक्षा प्राप्त होती है वे श्रेष्ठ रूप में विकसित होते है और इसके विपरीत कम शिक्षित बच्चे पिछड़े रह जाते है। स्पष्ट है कि मनुष्य के जीवन में शिक्षा के भिन्न–भिन्न उद्देश्य है। शिक्षा से सम्बन्धित मूल्य एवं आवश्यकताओं को तीन दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है।

2. शिक्षा का महत्व

शिक्षा को प्रकाश का स्रोत, अन्तर्दृष्टि, अन्तर्ज्योति, ज्ञान–वस्तु और मनुष्य का तीसरा नेत्र माना जाता है शिक्षा का प्रकाश व्यक्ति के सब संशयों का उन्मूलन और उनकी सब बाधाओं का निवारण करता है। शिक्षा से प्राप्त अन्तर्दृष्टि, व्यक्ति की बुद्धि, विवेक और कुशलता में वृद्धि करती है। शिक्षा व्यक्ति को वास्तविक शक्ति से सम्पन्न करती है, उसके सुख, सुयश एवं समृद्धि में योगदान देती है, उसमें जीवन के यथार्थ महत्व को समझने की क्षमता प्रदान करती है और उसे इस संसार रूपी भव सागर को पार करके, मोक्षप्राप्ति में सहायता देती है।

शिक्षा के महत्व को सीमा में नही बाधा जा सकता है। यह मनुष्य के भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों से सम्बन्धित होती है। यह उसे भूत से परिचित कराती है, वर्तमान में जीने योग्य बनाती है और भविष्य का निर्माण करने की क्षमता प्रदान करती है। प्राचीन काल में शिक्षा को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता है। जिससे इसकी महत्ता स्वतः दृष्टिगोचर होती है। ज्ञान प्राप्ति एवं अनुभवों के विकास, ईश्वरभक्ति, चरित्र के निर्माण, व्यक्तित्व के विकास, नागरिक एवं सामाजिक कर्त्तव्य भावना को जागृत करने, सामाजिक कुशलता की उन्नति करने, राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण करने एवं प्रसार के लिए शिक्षा की महत्ता को स्वीकार किया जाता रहा है।

बौद्ध काल एवं मुस्लिम काल में भी शिक्षा की महत्ता को स्वीकार किया गया है। मोहम्मद साहब ने ज्ञान को अमृत के समान बताया। इन्होंने ज्ञान प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य बताया ''जो छात्र ज्ञान की खोज करता है, उसे ईश्वर–स्वर्ग में उच्च स्थान प्रदान करता है।''

इस्लाम धर्म में कहा गया है ''जो मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है, जो ज्ञान की बात करता है, वह ईश्वर की प्रशंसा

RRIJM 2015, All Rights Reserved

करता है, जो ज्ञान की खोज करता है, वह ईश्वर की उपासना करता है।''

आधुनिक समय में शिक्षा उस कुंजी के समान है जो पीढ़ियों के अन्तराल में सामाजिक, आर्थिक स्तरों का निर्धारण करता है और उसके द्वारा किसी न किसी रूप में जीवन से सम्बन्धित आयामों का निर्धारण होता है। शिक्षा एक ऐसा मौलिक कारक है जो व्यक्ति की वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक दशा आदि को प्रभावित करती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसका अभिन्न अंग भी, समाज और व्यक्ति का वही सम्बन्ध है जो एक पूर्ण इकाई और उसके एक टुकड़े का। कोई मनुष्य जो समाजरूपी मशीन की एक सक्रिय और उपयोगी पूंजी है, जब तक वह समाज से सम्बद्ध है। समाज से जुड़े रहकर ही वह भली प्रकार से अपना विकास तथा अपनी उन्नति कर सकता है। व्यक्ति के विकास में समाज का सहयोग रहता है और उसके अभाव में वह उन्नति नहीं कर सकता।

शिक्षा सामाजीकरण की एक प्रक्रिया ही नहीं है बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों को आगामी पीढ़ियों तक पहुँचाने तथा विविध समस्याओं का सर्वोत्तम हल ढूंढ़ने का सबसे अच्छा माध्यम है।

वैदिक युग से आज तक शिक्षा के सम्बन्ध में ए0 एस0 अल्तेकर की मुख्य धारणा यह रही है कि ''शिक्षा प्रकाश का वह स्रोत है जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा पथ–प्रदर्शन करता है।''

टी0 रेमॉण्ट के अनुसार ''शिक्षा विकास की वह प्रक्रिया है जिसमें मनुष्य शैशवकाल से प्रौढ़काल तक विकास करता है और जिसके द्वारा वह धीरे–धीरे अपने को अनेक प्रकार से अपने प्राकृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक पर्यावरण के अनुकूल बनाता है।''

जन्म के समय मानव प्राणी अपनी मूल प्रवृत्तियों का ही जीव होता है। इन मूल प्रवृत्तियों को सुन्दर स्थायी भावों में परिवर्तित करना शिक्षा का ही कार्य है। जन्म के बाद से ही प्राणी को विविध परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। उसका जीवन सदैव संघर्षमय बना रहता है। इस संघर्ष के फलस्वरूप उसे अनेक प्रकार के अनुभव होते है, वस्तुतः अनुभव में ही उसकी शिक्षा निहित है। बिना शिक्षा के किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व सुव्यवस्थित और सुसंस्कृत नहीं हो सकता है।

शिक्षा के फलस्वरूप मनुष्य एक दूसरे के लिए प्रेम सहानुभूति तथा त्याग की भावना का अनुभव करता है। शिक्षा के ही परिणामस्वरूप व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हित की उपेक्षा करके समाज हित के लिए अपने को उत्सर्ग कर देता है। ''शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, समाज की चतुर्मुखी उन्नति और सभ्यता की बहुमुखी प्रगति की आधार शिला है।''

ए0 एस0 अल्तेकर के अनुसार ''शिक्षा को प्रकाश और शक्ति का ऐसा स्रोत माना जाता था, जो हमारी शारीरिक, मानसिक, भौतिक और आध्यात्मिक शक्तियों तथा क्षमताओं का निरन्तर एवं सामंजस्यपूर्ण विकास करके, हमारे स्वभाव को परिवर्तित करती है और उसे उत्कृष्ट बनाती है।''

प्राचीन भारत के मनीषी इस तथ्य से भली–भाँति अवगत थे। अतः उन्होंने शिक्षा की ऐसी प्रशंसनीय प्रणाली का प्रतिपादन किया। जिससे मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हो। इस युग में शिक्षा का मुख्य आधार – 'साः विद्याया विमुक्तये' था। अर्थात् शिक्षा वह है, जो मुक्ति दिलाये।

3. समायोजन

समायोजन जीव और उसके पर्यावरण के मध्य के स्थित का एक साम्य है, जिसमें कोई आवश्यकता अतृप्त नहीं रहती और जिसमें जीव के कार्य साामन्य रूप से होते रहते हैं दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि समायोजन से तात्पर्य पर्यावरण से सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध एवं उस दशा से है जिसके अन्तर्गत एक व्यक्ति प्रायः अपनी सभी आवश्यकताओं, शारीरिक तथा सामाजिक मांगों आदि की पूर्ति सामान्य रूप से कर लेता है। समायोजन की दिशा सापेक्ष होती है। पूर्ण समायोजन की केवल कल्पना ही की जा सकती है, उसका कारण यह है कि व्यक्ति का समायोजन उसकी अपनी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं तथा उसके पर्यावरण में पाई जाने वाली सुविधाओं आदि पर निर्भर है। सापेक्ष समायोजन के अन्तर्गत व्यक्ति कभी अपने व्यवहार में परिवर्तन लाता है तो कभी अपने पर्यावरण में। यदि आवश्यकता हुई तो व्यक्ति के व्यवहार एवं पर्यावरण दोनों में परिवर्तन तथा संशोधन संभव होता है। स्मिथ के अनुसार– ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जिसे जीवन में विभिन्न प्रकार की कठिनाईयों का सामना न करना पड़ता हो।

फलतः यह अनिवार्य है कि व्यक्ति के मन में कुण्ठाएँ, तनाव तथा दुश्चिन्ताएँ उत्पन्न हो। यह मानते हुए स्मिथ ने समायोजन की यह विशेषता बताई कि इसके अन्तर्गत व्यक्ति अपने जीवन की यथार्थ परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कुछऐसा करता है, जिससे कि वह अपनी कठिनाईयों को हल कर लेता है और अपना जीवन सुख और संतोष के साथ व्यतीत करता है।

जब व्यक्ति वातावरण के साथ अपने को समायोजित नहीं कर पाता है तो उसे असमंजन कहते हैं। व्यक्ति की मांगों और इच्छाओं की पूर्ति में जब बाधा पहुँचती है, तो उस व्यक्ति में द्वन्द्व खड़ा हो जाता है। यदि व्यक्ति उस द्वन्द्व का समाधान नहीं कर सकता तो कुसमायोजन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। व्यक्ति अपनी मॉगों और इच्छाओं की पूर्ति के लिए कुछ ऐसे आचरण करता है, जो अच्छे नहीं समझे जाते, जो समाज द्वारा स्वीकृत नहीं होते। इन व्यवहारों से व्यक्ति के भीतर सांवेगिक तनाव जो द्वन्द्व के कारण उत्पन्न होता है, कम नहीं होता। यही कुसमायोजन है। इस तरह व्यक्ति का वातावरण के प्रति ऐसा व्यवहार जो न उसके भीतर के द्वन्द्व का ठीक समाधान करता है, न सामाजिक स्वीकृति प्राप्त करता है, कुसमायोजन कहलाता है। समायोजन एक प्रकार का धनात्मक

संगठन है और कुसमायोजन ऋणात्मक संगठन है। कुसमायोजन पर प्रकाश डालते हुए जेम्स ड्रेवर ने लिखा है कि"कुसमायोजन किसी व्यक्ति की वह दशा है जो अपने भौतिक, व्यावसायिक तथा सामाजिक पर्यार्ववरण के साथ अनुकुकूलन या व्यवस्थापन पर्याप्त रूप में ं करने में ं असमर्थ होतेता है ै।" सामान्यतः उसके संवेगात्मक जीवन तथा व्यवहार पर प्रभाव के साथ। इससे यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति कुसमायोजन के कारण अपने वातावरण के साथ अनुकूलन नहीं कर पाता और उसमें एक प्रकार का संवेगात्मक तथा व्यवहारात्मक असंतुलन होता है। इसका प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता है।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कठिनाइयाँ व अड़चने आती हैं। वह उन्हें दूर करने का प्रयास करता है। सभी स्थितियों में सभी व्यक्तियों को सफलता नहीं मिल जाती। अतः कुण्ठाओं तनावों, दुश्चिन्ताओं का क्रम शुरू हो जाता है। वह उन्हें कम करने के प्रयास में लग जाता है। यदि वह अपने प्रयत्न में सफलता प्राप्त करता है तो समायोजित कहलाता है। समायोजन वही श्रेष्ठ है, जो व्यक्ति के पूरे जीवन को प्रभावित करता है। समायोजन की प्रक्रिया में तीन तत्व पाये जाते हैं–

1. प्रेरणा–समायोजन की प्रक्रिया किसी आवश्यकता या प्रेरणा से आरम्भ होती है।
2. कुण्ठित करने वाली परिस्थितियाँ–यदि परिवेश की परिस्थितियाँ आवश्यकताओं की तुष्टि में बाधक नहीं होती हैं, तो समायोजन स्वभावतया हो जाता है और कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती परन्तु कुण्ठा करने वाली परिस्थितियाँ उत्पन्न होने पर समायोजन की प्रक्रिया आगे नहीं बढ़ती है।
3. विविध अनुक्रियाएँ– आवश्यकता की पूर्ति में बाधाएँ उत्पन्न करती हैं। ये अनुक्रियाएँ सामान्य भी हो सकती हैं और असामान्य भी हो सकती हैं। इन अनुक्रियाओं के परिणाम स्वरूप व्यक्ति का वातावरण से समायोजन हो जाता है।

समायोजन की समस्या प्रेरणा से प्रारम्भ होती है। प्रेरणा लक्ष्योन्मुखी होती है। उस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु व्यक्ति विविध क्रियाएँ करता है। अनेक बार इन क्रियाओं में अनेक बाधाएँ आ जाती हैं। उस समय कोई व्यक्ति तो लक्ष्य बदल लेता है, तो कोई अधिक उत्साह से कार्य करता है, और कोई अपने मनोसंसार में खो जाता है। वैयक्तिक समायोजन का किशोरावस्था में अत्यधिक महत्त्व है।

किशोर यदि समायोजन नहीं कर पाता तो उसका प्रभाव प्रौढ़ावस्था तक रहेगा। किशोरावस्था ही समायोजन व सीखने की अवधि है, क्योंकि इस काल में ही व्यक्ति सीखने का इच्छुक व लचीला होता है। किशोर को सुरक्षा, प्यार, मित्रता, अहं की तृष्टि एवं विविधता चाहिए। वह इन्हें पाने को प्रयत्नशील रहता है। इसमें तीन कारक कठिनाइयाँ उपस्थित कर सकते हैं– पर्यावरण, स्वयं किशोर एवं उसका व्यक्तित्व।

प्रत्येक बालक किसी न किसी सामाजिक वातावरण में रहता है। इस वातावरण से ही उसकी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। बालक के चारों ओर के वातावरण में उपस्थित व्यक्ति और वस्तुएँ समान रूप से महत्वपूर्ण होती हैं और कुछ कम। बालक की इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति कभी सरल ढंग से हो जाती है और कभी उसकी इस प्रकार की पूर्ति में कुछ न कुछ बाघा पड़ती है। या समय अधिक लगता है। जब उसकी पूर्ति में समय अधिक लगता है या बाधा पड़ती है, तब उसमें तनाव उत्पन्न हो जाता है, वह कभी क्रोधित कभी दुःखी और निराशा का अनुभव करता है। कुछ दशाओं में और कुछ लोगों के साथ उसे प्रसन्नता और संतुष्टि मिलती है, इनके साथ उसका समायोजन हो जाता है। प्रत्येक बालक का वर्तमान और भविष्य का जीवन सुखी और आनन्ददायक तभी हो सकता है जब उसका व्यवहार समायोजन स्थापित करने में सहायक होता है।

4. व्यक्तित्व गुण

अपने प्रथम अवतरण से मृत्यु की षैय्या पर चिरनिद्रा में सो जाने तक की सम्पूर्ण अवधि में मनुश्य एक विद्यार्थी होता है जो जीवन के प्रारम्भ होते ही अपने अनुभवों की सहायता से ज्ञान का अर्जन करने लगता है। ये अनुभव मनुश्य को उसके पर्यावरण से प्राप्त होते हैं। जन्म के समय से ही प्रत्येक मनुश्य अपनी मूल प्रवृत्तियों के वषीभूत अस्थि–मज्जा का एक पुतला मात्र होता है।

बुद्धि से युक्त होने के कारण मानव एक स्तर के पष्चात् अपनी सहज प्रवृत्तियों का दास बनकर नहीं रहता वरन् अर्जित ज्ञान और स्व–विवेक के द्वारा इन प्रवृत्तियों को अपने अधीन करके वह 'मूल्योन्मुखी' जीवन की ओर अग्रसर होता है। विवेक से युक्त ज्ञानवान मनुश्य षिक्षा द्वारा चेतना के निम्न स्तर से उच्च, उच्च से उच्चतर एवं उच्चतर से उच्चतम स्तर को प्राप्त करता है। यही योग्यता उसे प्राणी जगत में षीर्श स्थान प्रदान करती है।

मनुश्य की श्रेश्ठता के संदर्भ में डॉ.. राधाकृश्णन ने कहा है कि ''जैव चेतना के निम्न स्तर पर मानव निर्विवाद रूप से एक प्राणी है, किन्तु बुद्धि से युक्त होनेने के कारण, प्रणि जगत में उसकी सामान्य सहभागिता के बावजूद अन्य प्राणियों की तुलना में उसकी श्रेश्ठता में संदेह नहीं किया जा सकता है।''

प्राणियों में श्रेश्ठ तथा बुद्धि युक्त होते हुए भी जीवन के ऊशाकाल में मनुश्य ज्ञान, भावनाओं, आदर्षों, परम्पराओं, मूल्यों तथा स्वयं के अस्तित्व से पूर्णतः अपरिचित होता है। समय के साथ उसका षारीरिक एवं मानसिक विकास होता है जिसके साथ वह संसार एवं स्वयं के अस्तित्व से परिचित होने लगता है। जैसे–जैसे समय व्यतीत होता है समाज के सम्पर्क में रहकर उसका व्यक्तित्व विकसित होने लगता है। ''वास्तव में ं जन्म से ही मानव सामाजिक प्राणी है तथा सामाजिक

RRIJM 2015, All Rights Reserved

अन्तःक्रिया के अभाव में कोई नवजात जीवित ही नहीं रह सकेगेगा। यहाँ तक कि स्वतन्त्र रूप से जीवित रहने योग्य होनेने पर भी नगण्य संख्ख्या के व्यक्ति ही एकांतवासी होनेना चाहते हैं। मानव की व्यक्तित्व विकास तथा सुरक्षा की आवष्यकता उसे समूह में रहने को प्रेरित करती है।''

मनुष्य की सम्पूर्णता की पहचान उसका व्यक्तित्व है तथा वह जैसे–जैसे समाज के सम्पर्क में आता है उसे समाज के रीति–रिवाजों, परम्पराओं, मूल्यों, आदर्षों तथा जीवन–दर्षन का ज्ञान होता है। चूँकि उसे भी समाज के सदस्य के रूप में आदर्ष नागरिक का स्थान प्राप्त करना होता है इसलिए वह स्वयं भी समाज के आदर्षों, मूल्यों, परम्पराओं तथा व्यवहारों को अंगीकार करने का प्रयास करने लगता है।

यह ज्ञान उसे अपने परिवार, मित्रों, आस–पड़ोस, विद्यालय, महाविद्यालयों आदि से निरन्तर प्राप्त होता रहता है। इन स्रोतों से प्राप्त ज्ञान के साथ ही उसके व्यक्तित्व के विषिष्ट गुणों, यथा – समायोजन, आत्म–सम्प्रत्यय, सामाजिक व्यवहार, मूल्य आदि का विकास होने लगता है।

व्यक्तित्व विकास व सामाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा वह समाज का एक कुषल सदस्य बन जाता ळें समाज के एक कुषल सदस्य के रूप में विद्यार्थी समाज में अपने लिए निर्धारित दायित्वों का अधिकाधिक श्रेश्ठता के साथ निर्वहन करने का प्रयास करता है। अपने दायित्वों के समुचित निर्वाह के परिणामस्वरूप समाज में उसे उत्तम स्थिति प्राप्त होती है। समाज में श्रेश्ठता का अनुभव विद्यार्थी के आत्म–सम्प्रत्यय को उच्च स्तर प्रदान करता है। उच्च आत्म–सम्प्रत्यय, श्रेश्ठ मूल्यों, उत्तम व्यवहार व समायोजन के साथ विद्यार्थी अपने व्यक्तित्व विकास की सम्पूर्णता की ओर अग्रसर हो जाता है।

जब व्यक्ति अपने विकास की सम्पूर्णता को प्राप्त कर लेता है। तो उससे (व्यक्ति से) परिवार तथा समाज को ही नहीं बल्कि उसके देष को भी यह आषा हो जाती है कि वह एवं उस जैसे अन्य नागरिक विष्व में उस देष की संस्कृति का महत्व स्थापित करेंगे। लेकिन यह तभी हो सकता है जब किसी समाज व देष के नागरिक कुषल सामाजिक सदस्य हों तथा अपनी संस्कृति के जीवन्त उदाहरण हों।

शैक्षिक मूल्य ऐसी परम्परा में आते हैं जिनके माध्यम से व्यक्ति अपने जीवन को पूर्ण बनाना चाहता है। सोषल ट्रेड पर गठित एक कमेटी के प्रतिवेदन में कहा गया है – ''व्यक्ति, विचारों, आदर्षों, तथा संस्स्थाओं के प्रति, प्रगाढ़ता रखता है। वे प्राचीनतम क्यों न हों,, वह उनमें संषोधन होने तक प्रतीक्षा करता है। वांछित मानवीय मूल्यों की अनुभूति की अपेक्षा करता है। अतः कहा जा सकता है कि मूल्ल्य, जीवन की कसौटैटी का अर्थ करते हैं, जीवन का निर्माण करते हैं।

मूल्यों का जीवन में, जीवन की पूर्णता में महत्वपूर्ण स्थान है किन्तु फिर भी युवा पीढ़ी में मूल्यों के अभाव का क्या कारण है ? इस संस्कारहीनता और मूल्यहीनता के बीज कहीं बाल्यकाल में ही तो नहीं पड़ जाते हैं ?

परिवार में बालक के आचरण पर पूरा ध्यान देना चाहिए। उन्हें पर्याप्त समय देकेकर उनके मनोभावों को समझना चाहिए। बालकों को सत्यम्–षिवम्–सुन्दरम् के अधिक से अधिक निकट लाने का प्रयास करना चाहिए। बालक में जीवन निर्माण्ण, चरित्र–निर्माण तथा मनुष्य निर्माण में सहायक विचारों को अनुस्स्यूतूत करने वाला वातावरण प्रदान करने की आवष्यकता है।''

मानव का जीवन मूल्यों के अभाव अथवा न्यूनता की स्थिति में अपूर्ण तथा मानवीयता के सोपान से निम्न अनुभव होता है। मानव तथा पशुओं को विभेदित करने का कार्य मानव की बौद्धिक सम्पदा एवं मानव मूल्य ही करते हैं।। यदि मनुश्य प्राचीन समय से उद्भासित सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक उपलब्धियों को नकारकर जीवन को स्वार्थ एवं भौतिक सुखों की ओर धकेलता चला जायेगा तो वह मानव जीवन पथभ्रश्ट एवं संस्कारविहीन होगा।

मूल्यहीन जीवन पतवार रहित नौका की तरह होता है, जो कभी अपनी मंजिल पर नही पहुँच पाती है। देष व समाज की संस्कृति का आधार भी यही मूल्य होते हैं। जब–जब देष व समाज के मूल्यों का महत्व घटा है तब–तब उस देष की सभ्यता व संस्कृति का पतन हुआ है। जीवन मूल्यों की दृढ़ता ही समाज व संस्कृति को प्राण वायु देती है।

मूल्यों का एक व्यक्ति के जीवन में जिस प्रकार सर्वोपरि महत्व है उसी प्रकार जीवन में व्यक्ति के अन्य सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुणों, जैसे–

समायोजन, सामाजिक–व्यवहार तथा आत्म–सम्प्रत्यय का भी महत्वपूर्ण स्थान है। विद्यार्थी की षिक्षा के प्रारम्भ से ही यह प्रयास किया जाता है कि उसके व्यक्तित्व के विकास हेतु विभिन्न गुणों का उत्तम विकास किया जाये।

आज के सामाजिक वातावरण में एक स्वस्थ एवं विकसित व्यक्तित्व के लिए विद्यार्थियों का निरन्तर परिवर्तनषील वातावरण के साथ स्वयं को समायोजित करना अतिआवष्यक है। समायोजन द्वारा ही व्यक्ति अपने रिष्तों का आदर करना सीखता है। उसमें सहनषीलता व कर्तव्य–परायणता की भावना का विकास होता है। समायोजन ही वह शक्ति है जो व्यक्ति को समाज में रहने के योग्य बनाती है तथा अपने जीवन में आने वाली कठिनाईयों का सामना करना सिखाती है। समायोजन की इस योग्यता का विकास एक विद्यार्थी के अपने सहयोगियों, सहपाठियों के साथ एवं कार्यक्षेत्र में सफलतापूर्वक अपने दायित्व का निर्वहन करने के लिए आवष्यक होता है।

समायोजन को प्रभावित करने वाले कारक समायोजन को विभिन्न घटक प्रभावित करते है, जिनका विवरण निम्नलिखित है :–

- आकांक्षा स्तर
- सामाजिक आर्थिक स्तर
- माता–पिता की स्थिति

RRIJM 2015, All Rights Reserved

- शहरी एवं ग्रामीण जीवन
- चिन्ता
- कुण्ठा
- पारीवारिक वातावरण
- संवेगात्मकता
- विद्यालयी वातावरण
- व्यक्ति का स्वास्थ्य
- मानसिक योग्यता
- लिंग
- बुद्धि
- विद्यालयी उपलब्धि
- आपसी समझ

5. शैक्षिक उपलब्धि

शैक्षिक प्रदर्शन का मूल्यांकन किसी भी परीक्षा में प्राप्त अंकों से किया जाता है। स्कूली बच्चों के अंक के आधार पर उसके शैक्षिक गुणवत्ता में अन्तर किया जाता है। इस आधार पर प्रत्येक छात्रों में सामान्य अथवा निम्न स्तर की अनुभूति का अनुभव होता है। स्कूल जाने वाले लड़के एवं लड़कियों के दृष्टिकोण में परीक्षा अंक के प्रथम (श्रेणी) पर उच्च स्तर की शैक्षणिक उपलब्धि प्रदर्शित होती है।

स्कूली बच्चों में विद्यालयी उपलब्धि के कई कारक है। जिनमें अभिक्षमता, बुद्धि के स्तर, उसकी प्रेरणा, अभिवृत्ति और सांवेगिक प्रतिक्रिया जो कि विद्यालय और पारिवारिक पर्यावरण से सम्बन्धित है एवं संगठित की जा सकती है। यह विचार प्रसिद्ध है कि बच्चों में उच्च बुद्धिमत्ता स्तर, मानसिक योग्यता उसकी उच्च शैक्षणिक योग्यता को दर्शाते है। यह विचार अत्यधिक अवसर के लिए सत्य है परन्तु कुछ घटनाओं के उदाहरण दिये जा सकते है जिसमें औसत बुद्धि स्तर के बच्चे अपने माता–पिता से अध्यापक और अधीअभिलाषी अपने स्कूल में अच्छी शैक्षिक उपलब्धि के लिए प्रेरित होते है। बच्चों के रूचि एवं विद्यालयी क्रियाकलापों में सम्बन्ध है। कक्षा के शैक्षणिक क्रिया–कलापों में सहभागितापूर्ण क्रियाएं लड़के और लड़कियों की सामर्थ अथवा क्षमता को प्रदर्शित करतें है।

परिवार बच्चों की शैक्षणिक उपलब्धि की क्षमता का एक महत्वपूर्ण साधन हैं आवश्यकता के समय पर बच्चों पर किया गया खर्च अधिक क्षमता के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। एक सामान्य एवं छोटे परिवारों के सदस्यों में बच्चों की सामाजीकरण की आवश्यकताओं के लिए विशिष्ट उपलब्धता होती है। कुछ केन्द्रित परिवार जहाँ व्यक्तियों की अधिक संख्या, भाई–बहन और जयेष्ठ पारिवारिक सदस्य सम्मिलित पाये जाते है। कुछ परिवार बहुत छोटे रख–रखाव में निवास करते है जहाँ भारतीय परिवारों में सभी व्यक्ति तुलनात्मक रूप से एक प्रमुखकर्ता के साथ निवास करते है। पति परिवार का सहायक और आय का आधार होता है। यह कार्य करते हुए परिवार के सदस्यों के जीवन–यापन के प्रति उत्तरदायी होता है। परिवार का अभिभावक पिता बच्चों की शिक्षा में सक्रिय रूप से सहभागी होता हैं जबकि कुछ घटनाओं में पत्नी पर पूर्णरूप से भरोसा किया जाता है जो बच्चों की नियमित जरूरतों की देख–भाल करती है। यह मातृत्व सहायता अपने बच्चों की शिक्षा के रूप में होती है और उनमें तुलनात्मक रूप से अभिरूचि एवं इच्छित अभिवृत्तियों को उत्पन्न करना होता है। अपने बच्चों के लिए मातृत्व सहायता अन्य शैक्षणिक क्रिया–कलापों और गृह कार्य के रूप में होती है। यह पूर्ण रूप से छोटे परिवारों में सम्भव हो पाता है। ये अपने पारिवारिक परिस्थिकी में सदृश्य रूप से इच्छित सीख ग्रहण करते रहते है। बड़े परिवारों में सीमित रख–रखाव के साथ अपनी अधिक उच्च गुणवत्ता से प्रौढ़ावस्था के व्यक्ति बच्चों के विकास के लिए वैयक्तिक रूप से ध्यान देते है।

6. निष्कर्ष

समायोजन एक गतिशील प्रक्रिया है। समायोजन प्रक्रिया में प्रत्येक अपनी क्षमतानुसार ही इस प्रक्रिया को अपना पाता है। व्यक्ति के समक्ष जब समस्याएं उत्पन्न होती है तो इसके निराकरण के लिए व्यक्ति द्वारा किये गये प्रयास को उस व्यक्ति की समायोजन क्षमता के रूप में समझी जा सकती है। किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास के लिए समायोजन क्षति आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति के सम्मुख कुछ न कुछ परेशानियाँ और समस्याएं होती है। एक व्यक्ति कितना प्रभावशाली है, यह उसकी समस्याओं की संख्या से नहीं ज्ञात होती है बल्कि उसकी प्रभावशीलता इस बात से स्पष्ट होती है कि वह इन समस्याओं का तथा जीवन की चुनौतियों का किस प्रकार सामना करता है। किसी विद्यार्थी का जीवन समाज से पूर्णतः सम्बन्धित होता है तथा समाज के योग्य सिद्ध होने के लिए उसके व्यक्तित्व के विषिश्ट गुणों का विकास अवष्यंभावी है। मनुश्य जीवन और उसके व्यक्तित्व की पूर्णता के लिए समाज और सामाजिक जीवन की आवष्यकता स्पश्ट करते हुए रॉल्फ एडोल्ल्फ ने लिखा है कि ''हम गम्भीर रूप से सामाजिक प्राणी हैं। यह हमारी सामाजिक प्रव्रवृत्ति ही है जो हमें मानव बनाती है, हमें चैतैतन्य बनाती है और हमें हमारे विषाल मस्तिश्क प्रद्रदान करती है।''

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सदंर्भ ग्रंथ सूची

1. शर्मा हितेश (2014), किशोरों की अपनी परिवार से अपेक्षा एवं उनके क्रोध का अध्ययन, प्रौढ़ शिक्षा, वॉल्यूम 58, अंक 4.
2. Goel Urmila (2014), Value pattern of male and female secondary school teachers: A comparative study, Journal of Educational and Psychological Research, Vol. 4, No. 1, PP 54-57.
3. कालडा राजकुमार एवं मनानी प्रीति (2013), गृह पर्यावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव, परिप्रेक्ष्य, अंक 3, पेज 97–103.
4. Kaur J., Rana J.S. and Kaur R. (2009), Home environment and academic achievement as correlates of self concept among adolescents, Stud Home Comm Sci, Vol. 3, No. 1, PP 13-17.
5. कौशल सविता (2013), विद्यालय नेतृत्व क्षमता का विद्यार्थिंयों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव, परिप्रेक्ष्य, वॉल्यूम 20, अंक 3.
6. Lutfun Rajul Saikia and Abdual Samaj (2013), Adjustment and Academic Achievement amongst students, Indian Journal of Psychometry and Education, Vol. 44 No. 1 PP 8-11.
7. लूनियाँ पुष्पेन्द्र कुमार (2013), किशोर विद्यार्थियों के विद्यालयी वातावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि स्तर एवं मूल्यों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, एडूसर्च, जरनल ऑफ एडूकेशन रिसर्च, वॉल्यूम 4, अंक 1.
8. सिंह जे.डी. और गोदारा अशोक (2014), चूरू व हनुमानगढ़, जिले में प्राथमिक स्तर पर विद्यालय वातावरण और विद्यार्थियों के ठहराव का अध्ययन, शिक्षा और मनोविज्ञान अनुसंधान जरनल वॉल्यूम 4, अंक 2, पेज 318–322.
9. श्रीवास्तव अर्चना और जोशी श्रुति (2015), कक्षा 9 के विद्यार्थियों के मूल्य एवं सामाजिक अध्ययन उपलब्धि पर मूल्य विश्लेषण प्रतिमान के प्रभाव का अध्ययन, एडूसर्च, जरनल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, वॉल्यूम 6, अंक 2, पेज 130–134.